

बेरोज़गारी और नाकाम विकास मॉडल से भड़का नेपाली युवाओं का आक्रोश

अतुल चंद्रा

काठमांडू इसलिए नहीं धधक रहा कि चंद सोशल मीडिया ऐप पर रोक लगा दी गई, यह इसलिए उद्वेलित है क्योंकि लोकतंत्र और आर्थिक गतिशीलता के वादे पर जी रही एक पीढ़ी का सामना एक ऐसी अर्थव्यवस्था तथा राजनीतिक व्यवस्था से हो रहा है जो उनके लिए हर दरवाज़ा बंद किए जा रही है। हाँ, इसके तात्कालिक कारण ज़रूर सरकारी नियंत्रण से जुड़े हैं: सरकार ने 26 प्रमुख सोशल मीडिया पटलों को आदेश दिए कि वे खुद को देश में रजिस्टर करवाएँ और जिन्होंने ऐसा नहीं किया उन पर प्रतिबंध लगा दिए गए। प्रतिबंधित पटलों में फ़ेसबुक, इंस्टाग्राम, वाट्सऐप, X आदि शामिल हैं। इस कदम से नाराज़ एक भीड़ नेपाल की संसद की ओर बढ़ी; पुलिस ने आँसूगैस, रबड़ बुलेट और कुछ जगहों पर असली गोलियों से भी भीड़ का मुक़ाबला किया। इन प्रदर्शनों के दौरान 9 सितंबर तक 19 लोग मारे जा चुके थे और 300 से ज्यादा घायल हो चुके थे। प्रदर्शनकारियों के दबाव में सरकार ने सोशल मीडिया प्रतिबंध हटा दिया और प्रधानमंत्री केपी ओली ने इस्तीफ़ा दे दिया है।

असल मुद्दा राजनीतिक अर्थव्यवस्था है

दूर से देखने पर ये टकराव ज़रूर डिजिटल आज़ादी की लड़ाई लग सकते हैं, लेकिन यह विश्लेषण अपरिपक्व होगा। नेपाल के Gen-Z (1997-2012 के बीच पैदा हुए लोग) के लिए सोशल मीडिया केवल मनोरंजन की चीज़ नहीं है; उनके लिए ये नौकरियाँ तलाशने, सूचनाओं और ख़बरों, संगठित होने के ज़रिए हैं और सामाजिक जीवन के केंद्र हैं। एक लंबे समय से चले आ रहे आर्थिक संकट के बीच इन पर प्रतिबंध लगा देना उन्हें एक सामूहिक सज़ा की तरह लग सकता है। लेकिन असली कहानी इससे कहीं गहरी है: नेपाल के विकास को गरिमामय रोज़गार उत्पन्न करने वाले घरेलू निवेश द्वारा स्थिर करने की बजाय प्रेषण (जो नागरिक काम करने विदेश जाते हैं उनके द्वारा भेजा गया धन) पर निर्भर रखा गया। वित्तीय वर्ष 2024-23 में डिपार्टमेंट ऑफ़ फ़ॉरेन एम्प्लॉयमेंट ने 839,266 श्रम परमिट जारी किए – लगभग 3 करोड़ की आबादी वाले देश के लिए यह आंकड़ा बहुत बड़ा है। 2024 में यह प्रेषण जीडीपी का 33% था, दुनिया में सबसे ज्यादा। ये आँकड़े ज़िंदगी की जद्दोज़हद को दर्शाते हैं न कि विकास को; एक ऐसी व्यवस्था जो अपने युवाओं को कम-वेतन वाले रोज़गार के लिए विदेशों में भेज देती है जिसके बदले उसकी बुनियादी ज़रूरतें पूरी हो पाती हैं, यह उत्पादकता की बजाय आश्रय पर निर्भर है।

इसीलिए इस प्रतिबंध का असर इतनी जल्दी दिखा। 2024 में 20.82% युवाओं में अल्प-रोज़गार या बेरोज़गारी की दर 20.82% पहुँचना, मंत्रिमंडल में फेर-बदल आम बात हो जाना, भ्रष्टाचार और घोटालों के बाहर आने के बीच डिजिटल दुनिया पर पाबंदियाँ लगाना “व्यवस्था” कम और अपमान ज्यादा लगा। वर्गीय सीमाओं से परे जल्दी से फैले इस आंदोलन में बांग्लादेश के छात्र आंदोलन और श्रीलंका के अरागालया आंदोलन की अनुगूँज है: अपनी वर्दी पहने स्कूलों और कॉलेजों के छात्र, शिक्षित बेरोज़गार, गिग या असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले श्रमिक, और मोहभंग की शिकार व्यापक जनता सब एक साथ आए और ये सब कुशासन से परेशान हैं।

मृतकों की संख्या, कफ़र्य और रियायत

घटनाओं का सही क्रम स्पष्ट नहीं है। सोशल मीडिया पटलों के पंजीकरण का आदेश और उसके बाद उन पर लगे प्रतिबंध की वजह से विरोध-प्रदर्शन शुरू हुए; सुरक्षा बलों ने जवाब दिया और उनके द्वारा बल-प्रयोग बढ़ता गया; सोमवार की रात तक 19 लोग मारे जा चुके थे और सैकड़ों घायल हो चुके थे; कर्फ्यू लगाया गया और लोगों के इकट्ठा होने पर रोक लगा दी गई; गृहमंत्री ने इस्तीफा दे दिया; मंत्रिमंडल की आपातकालीन बैठक हुई जिसमें प्रतिबंध को वापस ले लिए गए; मंगलवार सुबह तक प्रधानमंत्री ओली ने इस्तीफा दे दिया। यहाँ याद रखा जाना चाहिए कि लोगों में केवल डिजिटल प्रतिबंध को लेकर गुस्सा नहीं है। प्रदर्शनकारियों के नारे और तस्खियाँ भ्रष्टाचार, अभिजात वर्ग को मिलने वाली बेजा छूट और विकास न होने की ओर इशारा कर रहे थे। एमनेस्टी इंटरनेशनल ने माँग की है कि इस दौरान जानलेवा बलप्रयोग के संभावित अवैध इस्तेमाल की स्वतंत्र जाँच की जाए – यह भी एक कारण रहा कि कैसे यह प्रदर्शन डिजिटल पटलों के प्रतिबंध से बढ़कर सरकार की वैधता तक पहुँच गया।

पलायन : एक मौन जनमत-संग्रह

यदि किसी एक मानदंड से इस पीढ़ी की मनोदशा समझी जा सकती है तो वह है विदेश जाने के लिए श्रम परमिट। वित्तीय वर्ष 2024-25 में जारी किए गए 839,266 श्रम परमिट (जो इससे पिछले साल से कहीं ज्यादा थे) का मतलब है कि हर रोज़ हज़ारों की संख्या में लोग देश छोड़कर गए। ये लोग पर्यटक नहीं हैं; ये वही लोग हैं जो आज सड़कों पर उतरे हैं। जीडीपी का 33% इनके द्वारा विदेशों में कमाकर भेजा गया धन है – इसी से नेपाल के लोगों का गुज़र-बसर हो पता है और आयात का खर्च उठाया जाता है, लेकिन इनके पीछे छिपी है यह सच्चाई कि देश की घरेलू अर्थव्यवस्था में कोई संरचनात्मक परिवर्तन नहीं हुआ है। एक ऐसी व्यवस्था जो अपने शिक्षित युवाओं को स्थाई और गुणवत्तापूर्वक रोज़गार नहीं दे सकती, वहाँ डिजिटल और वास्तविक जनचौक ही वह स्थान रह जाते हैं जहाँ लोग अपने गरिमामय जीवन के अधिकार को दृढ़तापूर्वक पेश कर सकते हैं। संकट के बीच इस ‘जनचौक’ की घेरेबंदी कर देना एक किसी धमाके को न्यूता देने जैसा ही है।

वामपंथ ने अपने पैर पर मारी कुल्हाड़ी

नेपाल को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ़) द्वारा इक्स्टेंडेड क्रेडिट फैसिलिटी कार्यक्रम (निम्न-आय वर्ग वाले देशों के लिए मध्यम अवधि की वित्तीय सहायता) दिए जाने के बाद सरकार पर घरेलू आय बढ़ाने का दबाव बना। नतीजतन ई सेवाएँ देने वाली विदेशी कंपनियों के लिए एक नया डिजिटल सेवा कर निकाला गया और वैट के नियम भी पहले से कड़े कर दिए गए, लेकिन जब प्रमुख डिजिटल पटलों ने पंजीकरण कराने से मना कर दिया तो राज्य ने उन्हें ब्लॉक करना शुरू कर दिया। कर लगाने से शुरू हुआ यह मामला जल्दी ही डिजिटल नियंत्रण का माध्यम बन गया। यह सब तब हो रहा था जब आईएमएफ़ के कार्यक्रम द्वारा राजकोषीय समेकन के दबाव के चलते, जनता पहले से ही ईंधन की बढ़ी कीमतें और आर्थिक मुश्किलें झेल रही थी। सरकार द्वारा डिजिटल पटलों पर प्रतिबंध लगाने ने उस चिंगारी का काम किया जिसने भ्रष्टाचार, बेरोज़गारी के खिलाफ़ व्यापक प्रदर्शन को जन्म दिया। इससे यह भी पता चलता है कि जनता में व्याप्त अशांति एक ‘जनक्रांति’ कम और समाज कल्याण पर सरकारी खर्च में कटौती की वजह से खड़ी हुई ठोस भौतिक समस्याओं का नतीजा अधिक है।

चूँकि यह कार्रवाई और इसके राजनीतिक नतीजे सीपीएन (यूएमएल) के प्रधानमंत्री के कार्यकाल में हुए इसलिए ये नेपाल के वामपंथ के लिए एक रणनीतिक आपदा बन गयी है। नेपाल के वामपंथ में सालों से अंदरूनी गुटबाज़ी, अवसरवादी गठबंधन और नीतिगत भटकाव चला आ रहा है जिसकी वजह से युवाओं में इसकी साख पहले ही बहुत गिर चुकी है। जब वामपंथी लगने वाली सरकार नागरिकों के लिए प्रगति के अवसर पैदा करने की बजाय उनकी आज़ादी को नियंत्रित करने की कोशिश करे, तो वह नैतिक धरातल उन शक्तियों के हाथों खो बैठती है जो व्यक्ति आधारित कल्ट राजनीति और राजशाही को बहाल करने जैसे पार्टी-विरोधी मोहभंग का फ़ायदा उठाकर आगे बढ़ती हैं। राजशाही की बहाली की माँग इस साल साफ़ दिखी; ओली के इस्तीफ़े के साथ, यह माँग उठाने वाले खुद को “व्यवस्था” स्थापित करने वाले साबित करेंगे, हालाँकि इनकी आर्थिक समझ कमज़ोर और प्रतिगामी ही रहेगी। यही खतरा है कि : समतामूलक परिवर्तन का विरोध करने वाली शक्तियाँ वामपंथ के कुशासन का फ़ायदा उठाते हुए अपनी लोकप्रियता बढ़ाएँगी।

वैश्विक उत्तर के विशेषधिकारों का विरोध करने वाले और एक भावनात्मकता से मुक्त विश्लेषण पर ज़ोर देने वाले

साम्राज्यवाद विरोधी नज़रिए से देखने पर साफ़ होता है कि यह संकट विकास रहित निर्भरता के कारण पैदा हुआ है। विदेशों से कमाकर भेजे हुए धन से उपभोग तो चलता रहता है लेकिन इससे विदेशों पर निर्भरता बढ़ जाती है; वित्तीय सहायता पर आश्रित शासन कभी-कभार ही रोज़गार-केंद्रित औद्योगिक नीति में तब्दील हो पाते हैं; और बाहरी खरीद आधारित सार्वजनिक खर्च उत्पादन क्षमता को बढ़ाने की बजाय रेंट की प्रणालियों को ज़्यादा विकसित करता है। ऐसे में राज्य ने इन परिस्थितियों को सुधारने की जगह उन तमाम ज़रूरतों को नियंत्रित करने की कोशिश की जहाँ वास्तविकताएँ दिखाने की संभावना थी। इसीलिए सही प्रक्रिया और परिवर्तन लाने की बजाय डिजिटल पटलों पर प्रतिबंध लगाने को समस्याओं का समाधान करने की जगह असहमति को दबाने के रूप में देखा गया।

विपक्ष क्या कह रहा है (और क्या नहीं)

विपक्ष ने व्यापक परिस्थितियों को सरकार से जल्दी समझ लिया है। पुष्प कमल दहल (प्रचण्ड) ने सांत्वना व्यक्त करते हुए भ्रष्टाचार-विरोधी माँगों पर जल्द कार्रवाई करने का अनुरोध किया है, और “सोशल मीडिया पर प्रतिबंध” हटाने का भी। सीपीएन (यूनाइटेड सोशलिस्ट) और सीपीएन (माओइस्ट सेंटर) के वक्ताओं ने दमन की निंदा की है, एक निष्पक्ष जाँच की माँग उठाई है, साथ ही डिजिटल नियंत्रण को बेरोज़गारी तथा प्रशासन की नाकामी से जोड़कर पेश किया है। इन प्रतिक्रियाओं को देखा जाना इसलिए ज़रूरी है क्योंकि इनसे पता लगता है कि मुख्यधारा की राजनीति भी समझती है कि संकट रोज़गार और वैधानिकता का है, सिर्फ़ कानून-प्रशासन व्यवस्था का नहीं।

लेकिन इनमें वामपंथ की दुविधा भी दिखती है : अगर इसका नेतृत्व सिर्फ़ युवाओं के प्रदर्शनों पर प्रतिक्रिया दे सकता है और देश को विकास के उस रास्ते पर नहीं आगे बढ़ा सकता जो ऐसे रोष को पहले ही शांत कर दे, तो राजनीतिक क्षेत्र में सत्ता-विरोधी और राजतंत्रवादियों का वर्चस्व होगा क्योंकि वे समस्याओं को जल्दी हल करने का वादा करते हैं – उसके लिए भले ही लोकतांत्रिक प्रक्रिया का ह्रास ही क्यों न हो। सबसे अहम बिंदु नेपाल में ये प्रदर्शन इसलिए शुरू हुए क्योंकि सरकार ने जनता की आवाज़ को जगह देने वाले ज़रूरतों को नियंत्रित करने की कोशिश की। युवा इसलिए उद्वेलित हुए क्योंकि ये वे पटल हैं जहाँ वे अस्थायी रोज़गार खोज पाते हैं, दूसरों से जुड़ते हैं और अपनी बात रखते हैं, और ऐसा करने की उनके पास कोई और जगह नहीं। जब इन घटनाओं का व्यापक विश्लेषण हो तो ज़रूरी है कि मृतकों और घायलों की संख्या गिनी जाए। लेकिन साथ ही ढाँचागत समस्याओं का भी हिसाब लगाया जाए : हर साल हज़ारों लोग काम की तलाश में विदेश जाने को मजबूर होते हैं और उनके द्वारा भेजा गया धन जनता के न्यूनतम उपभोग को तो सम्भाल लेता है बुनियादी परिवर्तन की प्रक्रिया को और आगे धकेल देता है। ओली के इस्तीफ़े और सोशल मीडिया बैन को वापस लेने से फ़िलहाल मामला टलता हुआ ज़रूर दिख रहा है लेकिन Gen-Z ने अपना जो फ़ैसला सुना दिया है वो नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता। जब तक नेपाल विदेशों में कमाए गए धन पर निर्भरता और राजनीतिक गुणा-भाग से चलती सरकारों की जगह रोज़गार-केंद्रित विकास का मॉडल नहीं अपनाता तब तक सत्ता को जवाबदेह बनाए रखने का सबसे सशक्त रास्ता सड़कों से ही निकलेगा।